Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 12, December-2018, ISSN 2230-7540

चोल साम्राज्य के प्रशासनिक ढाँचें का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Anil Kumar*

BPSMV, Regional Center, Lula Ahir, Teaching Assistant, History

शोध सारः चोल साम्राज्य दक्षिण भारत का निःसन्देह सबसे शक्तिशाली साम्राज्य था। चोल साम्राज्य का अभ्युदय नौवीं शताब्दी में हुआ और दक्षिण प्रायःद्वीप का अधिकांश भाग इसके अधिकार में था। चोल शासकों ने श्रीलंका पर विजय प्राप्त कर ली थी और मालदीव द्वीपों पर भी इनका अधिकार था। कुछ समय तक इनका प्रभाव कलिंग और तुंगभद्र दोआब पर भी छाया था। इनके पास शक्तिशाली नौसेना थी और ये दक्षिण पूर्वी एशिया में अपना प्रभाव कायम करने में सफल हो सके। अपनी प्रारम्भिक कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के बाद करीब दो शताब्दियों तक अर्थात बारहवीं ईस्वी के मध्य तक चोल शासकों ने न केवल एक स्थिर प्रशासन दिया, वरन कला और साहित्य को बहुत प्रोत्साहन दिया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि चोल काल दक्षिण भारत का 'स्वर्ण युग' था। इस शोध-पत्र में चोल साम्राज्य के प्रशासनिक ढाँचें का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्दः चोल साम्राज्य, स्थिर प्रशासन, प्रशासनिक ढाँचा, दक्षिण भारत का 'स्वर्ण युग' और विश्लेषणात्मक अध्ययन।

----------X----------

परिचय

चोल प्राचीन भारत का एक राजवंश था। दक्षिण भारत में और पास के अन्य देशों तमिल चोल शासकों ने 9 वीं शताब्दी से 13 वीं शताब्दी के बीच एक अत्यंत शक्तिशाली हिन्दू साम्राज्य का निर्माण किया। 'चोल' शब्द की व्युत्पत्ति विभिन्न प्रकार से की जाती रही है। कर्नल जेरिनो ने चोल शब्द को संस्कृत "काल" एवं "कोल" से संबद्ध करते हुए इसे दक्षिण भारत के कृष्णवर्ण आर्य समुदाय का सूचक माना है। आरंभिक काल से ही चोल शब्द का प्रयोग इसी नाम के राजवंश द्वारा शासित प्रजा और भूभाग के लिए व्यवहृत होता रहा है। संगमयुगीन मणिमेक्लै में चोलों को सूर्यवंशी कहा है। चोलों के अनेक प्रचलित नामों में शेंबियन् भी है। शेंबियन् के आधार पर उन्हें शिबि से उद्भूत सिद्ध करते हैं। 12वीं सदी के अनेक स्थानीय राजवंश अपने को करिकाल से उद्भत कश्यप गोत्रीय बताते हैं। चोलों के उल्लेख अत्यंत प्राचीन काल से ही प्राप्त होने लगते हैं। कात्यायन ने चोडों का उल्लेख किया है। अशोक के अभिलेखों में भी इसका उल्लेख उपलब्ध है। किंतु इन्होंने संगमयुग में ही दक्षिण भारतीय इतिहास को संभवतः प्रथम बार प्रभावित किया। संगमकाल के अनेक महत्वपूर्ण चोल सम्राटों में करिकाल अत्यधिक प्रसिद्ध हुए संगमयुग के पश्चात् का चोल इतिहास अज्ञात है।

चोल साम्राज्य का अभ्युदय नौवीं शताब्दी में हुआ और दक्षिण प्रायःद्वीप का अधिकांश भाग इसके अधिकार में था। चोल शासकों ने श्रीलंका पर भी विजय प्राप्त कर ली थी और मालदीव द्वीपों पर भी इनका अधिकार था। कुछ समय तक इनका प्रभाव कलिंग और तुंगभद्र दोआब पर भी छाया था। इनके पास शक्तिशाली नौसेना थी और ये दक्षिण पूर्वी एशिया में अपना प्रभाव कायम करने में सफल हो सके। चोल साम्राज्य दक्षिण भारत का निःसन्देह सबसे शक्तिशाली साम्राज्य था। अपनी प्रारम्भिक कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के बाद क़रीब दो शताब्दियों तक अर्थात् बारहवीं ईस्वी के मध्य तक चोल शासकों ने न केवल एक स्थिर प्रशासन दिया, वरन् कला और साहित्य को बहुत प्रोत्साहन दिया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि चोल काल दक्षिण भारत का 'स्वर्ण युग' था।

चोल साम्राज्य की स्थापना

चोल साम्राज्य की स्थापना विजयालय ने की, जो आरम्भ में पल्लवों का एक सामंती सरदार था। उसने 850 ई. में तंजौर को अपने अधिकार में कर लिया और पाण्ड्य राज्य पर चढ़ाई कर दी। चोल 897 तक इतने शक्तिशाली हो गए थे कि, उन्होंने पल्लव शासक को हराकर उसकी हत्या कर दी और सारे टौंड मंडल पर अपना अधिकार कर लिया। इसके बाद पल्लव,

www.ignited.in

इतिहास के पन्नों से विलीन हो गए, पर चोल शासकों को राष्ट्रकूटों के विरुद्ध भयानक संघर्ष करना पड़ा। राष्ट्रकूट शासक कृष्ण तृतीय ने 949 ई. में चोल सम्राट परान्तक प्रथम को पराजित किया और चोल साम्राज्य के उत्तरी क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। इससे चोल वंश को धक्का लगा, लेकिन 965 ई. में कृष्ण तृतीय की मृत्यु और राष्ट्रकूटों के पतन के बाद वे एक बार फिर उठ खड़े हुए।

चोल साम्राज्य का उत्थान

छठी शताब्दी के मध्य के बाद दक्षिण भारत में पल्लवों, चालुक्यों तथा पाण्ड्य वंशों का राज्य रहा। पल्लवों की राजधानी कांची, चालुक्यों की बादामी तथा पाण्ड्यों की राजधानी मदुरई थी, जो आधुनिक तंजौर में है और दक्षिण अर्थात् केरल में, चेर शासक थे। कर्नाटक क्षेत्र में कदम्ब तथा गंगवंशों का शासन था। इस युग के अधिकतर समय में गंग शासक राष्ट्रकूटों के अधीन थे या उनसे मिलते हुए थे। राष्ट्रकूट इस समय महाराष्ट्र क्षेत्र में सबसे अधिक प्रभावशाली थे। पल्लव, पाण्ड्य तथा चेर आपस में तथा मिलकर राष्ट्रकूटों के विरुद्ध संघर्षरत थे। इनमें से कुछ शासकों विशेषकर पल्लवों के पास शक्तिशाली नौसेनाएँ भी थीं। पल्लवों के दक्षिण पूर्व एशिया के साथ बड़े पैमाने पर व्यापारिक सम्बन्ध थे और उन्होंने व्यापार तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ाने के लिए कई राजदूत भी चीन भेजे। पल्लव अधिकतर शैव मत के अनुयायी थे और इन्होंने आधुनिक चेन्नई के निकट महाबलीपुरम में कई मन्दिरों का निर्माण किया।

दीर्घकालिक प्रभुत्वहीनता के पश्चात् नवीं सदी के मध्य से चोलों का पुनरुत्थन हुआ। इस चोल वंश का संस्थापक विजयालय (850-870-71 ई.) पल्लव अधीनता में उरैयुर प्रदेश का शासक था। विजयालय की वंशपरंपरा में लगभस 20 राजा हुए, जिन्होंने कुल मिलाकर चार सौ से अधिक वर्षों तक शासन किया। विजयालय के पश्चात् आदित्य प्रथम (871-907), परातंक प्रथम (907-955) ने क्रमशः शासन किया। परांतक प्रथम ने पांड्य-सिंहल नरेशों की सम्मिलित शक्ति को, पल्लवों, बाणों, बैडुंबों के अतिरिक्त राष्ट्रकूट कृष्ण द्वितीय को भी पराजित किया। चोल शक्ति एव साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक परांतक ही था। उसने लंकापति उदय (945-53) के समय सिंहल पर भी एक असफल आक्रमण किया। परांतक अपने अंतमि दिनों में राष्ट्रकूट सम्राट् कृष्ण तृतीय द्वारा 949 ई. में बड़ी बुरी तरह पराजित हुआ। इस पराजय के फलस्वरूप चोल साम्राज्य की नींव हिल गई। परांतक प्रथम के बाद के 32 वर्षों में अनेक चोल राजाओं ने शासन किया। इनमें गंडरादित्य, अरिंजय और सुंदर चोल या परातक द्वितीय प्रमुख थे।

चोल प्रशासन

चोल प्रशासन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पद राजा का होता था। चोल कालीन शासन व्यवस्था राजतंत्रात्मक थी। राजा का पद वंशानुगत व्यवस्था पर आधारित था। राजा के लिए एक मंत्रिपरिषद की व्यवथा थी। राजकीय आदेशों का क्रियान्वयन 'ओलै' नाम के अतिविशिष्ट अधिकारी किया करते थे। राजा के प्रधान सचित को 'औलनायमकम' कहा जाता था। चोल प्रशासन में भाग लेने वाले उच्च पदाधिकारियों को 'पेरुन्दनम्' एवं निम्न श्रेणी के पदाधिकारियों को 'शेरुन्दनम्' कहा जाता था। इस समय अधिकारियों के वेतन का भुगतान पकद रूप में न करके भूमि के रूप में किया जाता था। 'विडैयाधिकारिन' नाम का अधिकारी कार्य प्रेषक किराने के रूप में कार्य करता था। राज्य के उच्च अधिकारियों (मंत्रियों) को 'उडनकुट्टम्' कहा जाता था।

प्रशासकीय इकाइयाँ

प्रशासन की सुविधा हेतु सम्पूर्ण चोल साम्राज्य 6 प्रान्तों में विभक्त था। प्रान्तों को 'मण्डलम्' कहा जाता था। प्रायः राजकुमारों को यहां का प्रशासन देखना पड़ता था। मण्डलम् को कोट्टम (कमिश्नरी) में, कोट्टम को नाडु (जिले) में एवं प्रत्येक नाडु को कई कुर्रमों (ग्राम समूह) में विभक्त किया गया था। बड़े-बड़े शहर या गांव एक अलग कुर्रम बन जाते थे और तनियूर या तंकुरम कहलाते थे। मण्डलम् से लेकर ग्राम स्तर तक के प्रशासन हेतु स्थानीय सभाओं का सहयोग लिया जाता था। 'नाडु' की स्थानीय सभा को 'नाटूर' एवं नगर की सभाओं को क्रमशः श्रेणी और पूग कहा जाता था। चोल सम्राट परान्तक प्रथम के शासन के 12वें एवं 14वें वर्ष के प्रसिद्व 'उत्तरमेरूर अभिलेखों' में चोल कालीन स्थानीय स्वशासन एवं ग्राम प्रशासन व्यवस्था का साक्ष्य मिलता है। स्थानीय स्वशासन चोल शासन प्रणाली की महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। स्थानीय स्वशासन में 'उर' तथा 'सभा' व महासभा के सदस्य वयस्क होते थे। उर सर्वसाधारण लोगों की समिति थी, जिसका कार्य होता था- सार्वजनिक कल्याण के लिए तालाबों व बगीचों के निर्माण हेतु गांव की भूमि का अधिग्रहण करना।

- **प्रादेशिक प्रशासन-** चोल साम्राज्य प्रान्तों में विभाजित था जिन्हें मण्डलम् कहा जाता था। चोल साम्राज्य में 8 मंडल थे। मण्डल का प्रशासन करने के लिए किसी राजकुमार या उच्च अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी जो राजा के वाइसराय के रूप में कार्य करता था। प्रत्येक मंडल कोट्टम में बंटा हुआ था। कोट्टम नादुओं में विभाजित थे। नादु सम्भवतः

www.ignited.in

आधुनिक जिले के समान था। कई ग्रामों के समूह को कुर्रम कहते थे।

- **स्थानीय स्वशासन-** चोल प्रशासन की प्रमुख विशेषता उसका स्थानीय स्वशासन था। ग्राम स्वशासन की पूर्ण इकाई थे और ग्राम का प्रशासन ग्रामवासी स्वयं करते थे। चोल शासकों से इस अभिलेखों से इस व्यवस्था पर विस्तृत प्रकाश पड़ता है।

- **व्यवस्था-** आर्थिक दंड सामाजिक अपमान पर आधारित होते थे। आर्थिक दंड में काशु लिया जाता था जो संभवतः सोने की मुद्रा थी।

सभा या ग्राम सभा

यह मूलतः अग्रहारों व ब्राह्मणों बस्तियों की संस्था थी। इसके सदस्यों को 'पेरुमक्कल' कहा जाता था। अभिलेखों से प्राप्त जानकारी के अनुसार ग्राम को 30 भागों में विभाजित कर दिया जाता था। निश्चित योग्यता रखने वाले एक व्यक्ति को चुना जाता था। निम्नलिखित योग्यता आवश्यक थी-

(1) वह उस ग्राम का निवासी हो।

(2) उसकी आयु 35 और 70 वर्ष के बीच हो।

(3) एक-चैथाई वेलि (लगभग डेढ़ एकड़) से अधिक भूमि का स्वामी हो।

(4) अपनी ही भूमि पर बनाये मकान में रहता हो।

(5) वैदिक मन्त्रों और ब्राह्मण ग्रन्थों का सम्यक ज्ञान हो।

निम्नलिखित बातें सदस्यता के अयोग्य घोषित करती थीं-

जो पिछले तीन वर्षों से किसी समिति का सदस्य रहा हो।

- जिसने सदस्य के रूप में आय-व्यय का लेखा-जोखा अपने विभाग को न दिया हो।

- भयंकर अपराधों में अपराधी घोषित हो।

इस प्रकार की योग्यता रखने वाले 30 भागों में से प्रत्येक में एक व्यक्ति को घड़े में से निकाले हुए पर्चे के आधार पर चुन लिया जाता था। नाम के ये पर्चे किसी बालक द्वारा निकलवा लिए जाते थे। इन सदस्यों का कार्यकाल 1 वर्ष था। इन सदस्यों में 12 स्थायी समिति के, 12 उपवन समिति के और 7 तालाब समिति के लिए चुने जाते थे। समिति को वारियम कहते थे और यह ग्राम सभा के कार्यों का संचालन करती थी। ग्राम सभा के कार्यों के लिए कई समितियां होती थीं। महासभा को 'पूरुगरि', इसके सदस्यों को 'पेरुमक्कल' एवं समिति के सदस्यों को 'वारियप्पेरुमक्कल' कहा जाता था। व्यापारियों की सभा को 'नगरम' कहा जाता था। नगरों में व्यापारियों के विभिन्न संगठन थे, जैसे- मणिग्राम, वलंजीयर आदि। चोल काल के 'उर' का रूप लघुगणतंत्र जैसा था। इस समय सार्वजनिक भूमि महासभा के अधिकार क्षेत्र में होती थी। महासभा ग्रामवासियों पर कर लगाने, उसे वसूलने एवं बेगार लेने का भी अधिकार अपने पास रखती थी। सभा या महासभा वर्ष में एक बार केन्द्रीय सरकार को कर देती थी। महासभा की आय और व्यय का निरीक्षण केन्द्र सरकार के अधिकारी किया करते थे। केन्द्र सरकार असामान्य स्थितियों में ही ग्रामसभा के स्वायत्त शासन में हस्तक्षेप करती थी।

ग्राम सभा के अनेक कार्य थे। यह भूमिकर एकत्र करके सरकारी खजाने में जमा करती थी। तालाबों और सिंचाई के साधनों का प्रबन्ध करती थी। ग्राम के मन्दिरों और सार्वजनिक स्थानों की देखभाल, ग्रामवासियों के मुकदमों का फैसला करना, ग्राम की सड़कों को बनवाना, ग्राम में औषधालय खोलना, ग्राम के बाजारों और पेठों का प्रबन्ध करना, इत्यादि ग्राम सभा के कार्य थे।

व्यापारियों से संबंधित हितों की देखभाल हेतु-मणिग्रामम, वलंजियार, नानादेशी जैसे समूह थे। धार्मिक हित समूहों में मूलपेरूदियार था। यह मंदिरों की व्यवस्था की निगरानी करता था। संपूर्ण साम्राज्य मंडलों (प्रान्तों) में बंटा हुआ था। प्रान्तों का विभाजन वलनाडु या नाडु में होता था। उसके नीचे गांव का समूह कुर्रम या कोट्टम कहलाता था। सबसे नीचे गांव था। ग्राम की स्थिति पट्टे के अनुसार भिन्न प्रकार की होती थी। गांवों की तीन श्रेणियाँ थीं- ऐसे ग्राम सबसे ज्यादा होते थे जिनमें अंतर्जातीय आबादी होती थी एवं जो भू-राजस्व थे। सबसे कम संख्या में ऐसे ग्राम होते थे जो ब्रह्मदेय कहलाते थे एवं इनमें पूरा ग्राम या ग्राम की भूमि किसी एक ब्राह्मण समूह को दी गई होती थी। ब्रह्मदेय से संबंधित अग्रहार अनुदान होता था जिसमें ग्राम ब्राह्मण बस्ती होता था एवं भूमि अनुदान में दी गई होती थी। ये भी कर मुक्त थे, किन्तु ब्राह्मण अपनी इच्छा से निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कर सकते थे।

आय के साधन-

राज्य की आय का मुख्य साधन भूराजस्व था। भूराजस्व निर्धारित करने से पूर्व भूमि का सर्वेक्षण, वर्गीकरण एवं नाप-जोख कराई जाती थी। तत्कालीन अभिलेखों से ज्ञात होता है कि, राजराज प्रथम एवं कुलोत्तुंग के पैर की माप ही भूमि की

www.ignited.in

लम्बाई मापने की इकाई बनी। भूमिकर भूमि की उर्वरता एवं वार्षिक फसल चक्र देखने के बाद निर्धारित किया जाता था। सम्भवतः चोल काल में भूमि कर उपज का एक तिहाई हुआ करता था, जिसे अन्न व नकद दोनों रूपों में लिया जाता था। चोल अभिलेखों में भूमि कर के अतिरिक्त अन्य करों का उल्लेख मिलता है। राजस्व विभाग का उच्च अधिकारी 'वरित्पोत्तगकक्' कहा जाता था। इन करों के अतिरिक्त् चोल राजा निकटवर्ती क्षेत्रों की लूट मार से भी अपनी आय बढ़ाते थे। विवाह समारोह पर भी कर लगता था। अभिलेखों में करो व वसूलियों के लिए 'हरै' या 'वरि', 'मरुन्पाडु' और 'द्रंडम्' शब्द का प्रयोग किया गया है। अन्न का मान एक कलम (तीन मन) था। बेलि भूमि माप की इकाई थी। सोने के सिक्के को काशु कहा जाता था। चोल अभिलेखों में भूमि कर के अतिरिक्त अनेक प्रकार के कर लगाए जाते थे, जैसे- मरमज्जाडि (उपयोगी वृक्षकर), कडमै (सुपाड़ी के बागान पर कर), मनैइरै (गृहकर), कढ़ैइरै (व्यापारिक प्रतिष्ठान कर), पेविर (तेलघानी कर), पाडिकावल (ग्राम सुरक्षा कर), मगन्यै (स्वर्णकार, लौहकार, कुम्भकार, बढ़ई आदि के पेशों पर लगाया जाने वाला कर)।

सैन्य संगठन

चोल राजाओं ने एक विशाल सेना का संगठन किया। सेना के प्रमुख अंग थे- पैदल, घुड़सवार, हाथी और नौसेना। सेना में अनुशासन पर बड़ा जोर दिया जाता था। सेना को नियमित रूप से ट्रेनिंग दी जाती थी और विशेष सैनिक शिविर (कडगम) भी लगाये जाते थे। अश्व सेना के लिये बहुमूल्य अरबी घोड़ों को खरीदा जाता था। इनमें अधिकांश घोडे दक्षिण भारत की जलवायु के कारण मर जाते थे और इस प्रकार राज्य का बहुमूल्य धन विदेशों को चला जाता था। चोल सेना की एक विशेषता जहाजी बेडे का संगठन था। इस शक्तिशाली जहाजी बेड़े के कारण ही चोल राजाओं ने समुद्र पार अनेक द्वीपों को विजय किया था। बंगाल की खाड़ी एक चोल झील बन गई थी। वर्तमान समय की तरह, उस समय भी सेना में अनेक पद (रैंक) होते थे जैसे नायक, महादण्डनायक इत्यादि। विशेष वीरता दिखाने पर परमवीरचक्र की तरह क्षत्रिय शिखामणि की उपाधि दी जाती थी। यद्यपि सेना में अनुशासन पर जोर दिया जाता था, फिर भी चोल सैनिकों का विजित शत्रुओं के प्रति व्यवहार बहुत बर्बर होता था। स्त्रियों और बच्चों पर भी अमानुषिक अत्याचार किये जाते थे। सेना में अलग-अलग हिस्सों के अलग-अलग नाम थे। राजा की व्यक्तिगत सुरक्षा में पैदल सेना- बडेपेर्रैकैक्कोलस, गजारोही दल-कुजिरमल्लर, अश्वारोही दल-कुच्चैबगर, धनुर्धारी दल-बल्लिगढ़, पैदल सेना में सर्वाधिक शक्तिशाली- कैककोलर, भाला प्रहार करने वाला दल- सैंगुन्दर, राजा का अति विश्वसनीय अंगरक्षक-वलैक्कार कहलाते थे। सेना गुल्म एवं छावनियों (कड़गम) में रहती थी। सेना की टुकड़ी का नेतृत्व करने वाला नायक तथा सेनाध्यक्ष महादंडनायक कहलाता था।

चोलों की स्थायी सेना में पैदल, गजारोही, अश्वारोही आदि सैनिक शामिल होते थे। इनके पास एक बड़ी नौसेना थी, जो राजराज प्रथम एवं राजेन्द्र प्रथम के समय में चरमोत्कर्ष पर थी। बंगाल की खाड़ी चोलों की नौसेना के कारण ही 'चोलों की झील' बन गई। 'बड़पेर्र कैककोलस' राजा की व्यक्तिगत सुरक्षा में तैनात पैदल दल को कहते थे, जबकि 'कुंजिर-मल्लर' गजारोही दल को, 'कुदिरैच्चैवगर' अश्वारोही दल को, 'बिल्लिगल' धनुर्धारी दल को, 'कैककोलस' पैदल सेना में सर्वाधिक शक्तिशाली को, 'सैगुन्दर' भाला से प्रहार करने में निपुण सैनिकों को एवं 'वेलैक्कार' राजा की अतिविश्वसनीय अंगरक्षक को कहते थे। सेना गुल्मों व छावनियों (कडगम) में रहती थी। चोल काल में सेना की टुकड़ी का नेतृत्व करने वाले को नायक तथा सेनाध्यक्ष को महादण्डनायक कहा जाता था। सेना में अनेक सेनापति ब्राह्मण थे, जिन्हें ब्रह्माधिराज कहा जाता था।

न्याय व्यवस्था

राजा सर्वोच्च न्यायाधीश होता था। चोल अभिलेखों में राजा के धर्मासन का अंतिम न्याय प्राप्त करने के रूप में उल्लेख है, जहाँ पर राजा धर्मासनभट्ट (स्मृतिशास्त्र ज्ञाता, ब्राह्मण एवं विद्वान) की सहायता से न्याय करता था। छोटे विवादों पर स्थानीय निगम निर्णय देते थे। चोलों की दण्ड व्यवस्था में आर्थिक दण्ड एवं सामाजिक अपमान का दण्ड दिया जाता था। प्रायः आर्थिक दण्ड काशु (मुद्रा) में दिया जाता था।

निष्कर्ष

दक्षिण भारत में और पास के अन्य देशों में तमिल चोल शासकों ने 9 वीं शताब्दी से 13 वीं शताब्दी के बीच एक अत्यंत शक्तिशाली हिन्दू साम्राज्य का निर्माण किया। चोल प्रशासन व्यवस्था एक जटिल नौकरशाही पर आधारित थी। राजा प्रशासन का प्रमुख था। चोल राजाओं के अनेक अभिलेख उस समय की प्रशासन-व्यवस्था पर भी प्रकाश डालते हैं। चोल साम्राज्य के विस्तार के साथ राजा की शक्ति और सम्मान में भी वृद्धि हो गई थी। राजा को असीमित शक्तियां प्राप्त थीं, फिर भी राजा प्रशासन में विभागों के प्रमुख से परामर्श लिया करता था। कुछ चोल राजाओं की मूर्तियां भी मन्दिर में स्थापित की गई और कुछ विशेष मन्दिरों का नाम राजा के नाम पर पड़ा, जैसे तंजौर का राजराजेश्वर मन्दिर। चोल साम्राज्य में उत्तराधिकार का नियम निश्चित था। राजा अपने जीवन-काल

www.ignited.in

में ही अपना उत्तराधिकारी घोषित कर देता था जिसे युवराज कहते थे। युवराज को प्रशासन का अनुभव कराया जाता था और शासन-कार्य में वह अपने पिता की सहायता करता था। चोल प्रशासन में हम मन्त्रिमण्डल का उल्लेख नहीं पाते। अभिलेखों से पता चलता है कि सिविल सर्विस का संगठन सुव्यवस्थित था और विभागाध्यक्ष अपने विभाग का कार्य नहीं देखता था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

झा, द्विजेन्द्र नारायण तथा श्रीमाली, कृष्णमोहन, प्राचीन भारत का इतिहास।

गुप्ता, देवेन्द्र, प्राचीन भारतीय समाज एवं अर्थव्यवस्था।

रायचैधरी, हेमचन्द्र, प्राचीन भारत का राजनैतिक इतिहास।

श्रीवास्तव, के0 सी0, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति

शास्त्री, नीलकंठ, दक्षिण भारत का इतिहास।

अजय कुमार, दक्षिण भारत का राजनीतिक इतिहास।

मिश्र, श्याम मनोहर, दक्षिण भारत का राजनैतिक इतिहास (प्रारम्भ से 14वीं शताब्दी तक।)

लूनिया, बी0एन0, प्राचीन भारतीय संस्कृति।

दुबे, हरिनारायण, दक्षिण भारत का इतिहास, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

श्रीवास्तव, बलराम, दक्षिण भारत, चौ खम्बा विद्या भवन, बनारस।

Corresponding Author

Dr. Anil Kumar*

BPSMV, Regional Center, Lula Ahir, Teaching Assistant, History

dharam.jajoria@gmail.com